



बुन्देलखंड में चने की उन्नत खेती

रामकुमार*, विनय कुमार**, विवेक कुमार***,
उदयभान निषाद**** और राम केवल*****

॥ बुन्देलखंड भारत का प्रमुख दलहन उत्पादक क्षेत्र है। बुन्देलखंड क्षेत्र में 13 जिले शामिल हैं। इनमें उत्तर प्रदेश के 7 जिले और मध्य प्रदेश के 6 जिले शामिल हैं। इस क्षेत्र में मुख्यतः चना, मटर और मसूर रबी मौसम में और मूंग और उड़द खरीफ मौसम में उगायी जाती हैं। चना लेग्यूमिनेसी कुल का सदस्य है। गेहूँ के पश्चात रबी में उगाई जाने वाली दूसरी महत्वपूर्ण फसल है। यह समस्त भारत की मुख्य दलहनी फसल है। चने के पौधे में नीले अथवा लाल रंग के फूल आते हैं। इसकी जड़ें मूसला होती हैं, जोकि मृदा में काफी गहरी जाती हैं। चना एक पौष्टिक आहार है। इसके बीज को कच्ची अवस्था में सब्जी के रूप में और पकी अवस्था में दाल के रूप में उपयोग करते हैं। इसमें 21 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है। चने की जड़ों में एक बैक्टीरिया पाया जाता है, जो बदले में वायुमंडल की नाइट्रोजन को अवशोषित करके मृदा में एकत्र करता है। इसलिए दलहनी फसलों में नाइट्रोजन की कम आवश्यकता होती है। ॥

भारत, विश्व में सर्वाधिक चने का उत्पादन करता है। देश में विश्व की 67 प्रतिशत चने की पैदावार होती है। भारत में सर्वाधिक चने का उत्पादन मध्य प्रदेश में होता है। उसके बाद राजस्थान, महाराष्ट्र तथा उत्तर प्रदेश हैं। उत्तर प्रदेश में चने के क्षेत्रफल की दृष्टि से झांसी का पहला स्थान है। इसके बाद क्रमशः इलाहाबाद और आगरा का है। बांदा जिले में चने की खेती सबसे अधिक क्षेत्रफल में होती है। इसके बाद हमीरपुर, जालौन और झांसी इत्यादि हैं।

*, **एवं***शोध छात्र, उद्यान विज्ञान विभाग;
****सह-प्राध्यापक, कीट विज्ञान एवं कृषि जन्तु विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005 (उत्तर प्रदेश) ****शोध छात्र, सरदार बल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश)

तैयारी एवं बुआई समय

चने के लिए भूमि तैयार करने में अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता है। कृषक दो-तीन बार जुताइयां करके खेत में चने को बो देते हैं। चना प्रायः मक्का, कपास, चरी, धान इत्यादि के बाद में बोया जाता है। इन फसलों के कटते



चने की फसल

उन्नत किस्में

किस्मों का चयन वहां की फसल प्रणाली, बुआई का समय, सिंचाई जल की उपलब्धता इत्यादि कारकों पर निर्भर करता है। बुन्देलखंड के लिए चने की उकठा एवं शुष्क जड़गलन रोग से प्रतिरोधी, जल्द पकने वाली बड़े एवं मध्यम दाने वाली किस्में उपयुक्त होंगी।

देसी चना: डी.सी.पी. 92-3, विजय, जे.जी. 315, जे.जी. 16, जे.जी. 130, पूसा 391, दिग्विजय

काबुली चना: शुभ्रा, उज्ज्वल, पी. के.वी. 4, पूसा शुभ्रा

ही यदि खेत को किसी मिट्टी पलटने वाले हल से जोतकर इसके बाद 2-3 बार देसी हल चलाकर भूमि तैयार की जाये, तो चने की अत्यधिक उपज होती है। इस खेत में अपर्याप्त रूप से तैयार हुई ढेलायुक्त भूमि में भी चने की अच्छी उपज होती है।

मृदा दोमट या चिकनी दोमट मृदा, जिसका पी-एच मान 6.0 से 7.5 के मध्य हो, उपयुक्त होती है। चने की किस्म के अनुसार छोटे दाने वाली प्रजातियों के लिए 65 कि.ग्रा. एवं मध्यम के लिए 75-80 कि.ग्रा. व बड़े दाने वाली किस्म के लिए (काबुली) 100-120 कि.ग्रा./हैक्टर बोते हैं।

चने की बुआई रबी ऋतु में की जाती है। मैदानी क्षेत्र में चने की बुआई का सर्वोत्तम समय 15 से 30 अक्टूबर तक होता है। तराई वाले क्षेत्रों में चने की बुआई देर से नवम्बर में की जाती है। इसकी बुआई हल के पीछे कूंड में 6 से 8 सें.मी. की गहराई में करनी चाहिए। कूंड से कूंड की दूरी 30 से 45 सें.मी. रखनी चाहिए।

जलवायु

चना रबी मौसम की दलहन फसल

है। उष्णकटिबंधीय जलवायु में इसे शरद ऋतु में उगाया जाता है, जबकि समशीतोष्ण जलवायु क्षेत्रों में चने की खेती ग्रीष्म या बसंत काल में की जाती है।

चने में पुष्पावस्था को वहां का तापमान प्रकाश, अवधि एवं नमी की उपलब्धता इत्यादि अजैविक कारक प्रभावित करते हैं।

सामान्यतः कम तापमान एवं लघु प्रकाश अवधि में पुष्प देरी से निकलते हैं। बढ़वार अवस्था में चने की फसल अत्यधिक दैनिक तापमान यानी 35 डिग्री सेल्सियस एवं 15 डिग्री सेल्सियस तापमान से ज्यादा प्रभावित होती है। चने की अच्छी वृद्धि एवं पैदावार के लिए बुआई से लेकर कटाई तक 30 से 15 डिग्री सेल्सियस तापमान अच्छा माना जाता है।

बीजोपचार

बीजजनित रोगों से बचाव के लिए फफूंदनाशक द्वारा बीजोपचार अति आवश्यक है। चने को उकठा एवं जड़गलन रोग से बचाव के लिए 2.5 ग्राम थीरम या 1 ग्राम बाविस्टिन या 1.5 ग्राम थीरम + 0.5 ग्राम बाविस्टिन प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना लाभकारी है। यदि दीमक का प्रकोप अधिक हो, तो क्लोरपायरीफॉस 1 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज द्वारा बीजोपचार करें।

दलहन फसलों की जड़ ग्रंथियों की संख्या बढ़ाने के लिए उचित राइजोबियम नस्ल द्वारा बीजोपचार करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

चने का अधिक उत्पादन लेने के लिए सन्तुलित मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। चने के लिए उर्वरकों की आवश्यकता वहां की मृदा उर्वरता, मृदा नमी, प्रजातियों इत्यादि कारकों पर निर्भर करती है।

सामान्यतः चने में 15 से 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 से 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 15 से 20 कि.ग्रा. पोटाश अथवा 20 कि.ग्रा. सल्फर देने से अधिक उपज मिलती है।

चना फलीछेदक

इसकी गिडार फलियों में छेद करके अपने सिर को फलियों के अन्दर डालकर दानों को खाती हैं। इस कीट की रोकथाम के लिए न्यूक्लियर पॉलीहाइड्रोसिस वायरस (एन.पी.वी.) 250 शिशु की दर से उपयोग करें। इसकी रोकथाम के लिए इंडोसल्फॉन 35 ई.सी. 1.25 लीटर/हैक्टर कार्बोरिल 50 प्रतिशत लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर में छिड़काव करें।



चने में खरपतवार के नुकसान से बचाव

जल प्रबंधन

चने की फसल को जाड़ों में वर्षा हो जाने पर सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। आवश्यकता पड़ने पर पहली सिंचाई बुआई के 45 से 50 दिनों के बाद फूल आने से पहले तथा दूसरी सिंचाई फली बनने के बाद करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

फसल उत्पादन में खरपतवार बहुत ही घातक एवं बड़ी जैविक बाधा होते हैं। जैविक कारक द्वारा कुल नुकसान की लगभग 37 प्रतिशत हानि केवल खरपतवारों से होती है।

चने की फसल में बथुआ, जंगली जई, मोथा एवं कृष्णनील प्रमुख खरपतवार हैं। इसके नियंत्रण के लिए पहली सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। अधिक खरपतवार होने पर सन्तुलित मात्रा में खरपतवारनाशी दवा का प्रयोग करना चाहिए जैसे-पेंडीमैथालिन 750-1000 मि.ली./हैक्टर एवं फलूक्लोरैलिन 750-1000 मि.ली./हैक्टर।

रोग एवं उनका प्रबंधन

उकठा

यह रोग फ्यूजेरियम नामक फफूंदी से लगता है। इसके प्रभाव से पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और रोगी पौधे की बढ़वार रुक जाती है। पौधे मर जाते हैं और रोगी पौधे की जड़ें सड़कर काली हो जाती हैं।

इसकी रोकथाम के लिए उकठारोधी किस्म बोनी चाहिए। उचित फसलचक्र अपनाकर गहरी जुताई और देर से फसल बोकर तथा बीज का थीरम से उपचार करके बोयें। अधिक उकठा रोग दिखाई देने पर कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम/लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

अंगमारी या झुलसा

यह रोग फफूंदी से लगने वाला रोग है। पौधों के तने, पत्तियों और फलियों पर भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में पीले रंग के हो जाते हैं। पौधे धीरे-धीरे कमजोर होकर मर जाते हैं।

रोकथाम के लिए रोगरोधी किस्में और उचित फसलचक्र अपनायें एवं अधिक प्रकोप होने पर 0.25 प्रतिशत इंडोसल्फॉन एम. 45 के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

कीट एवं उनका प्रबंधन

सेमीलूपर

यह कीट पिछले कुछ वर्षों से उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में चने की फसल पर भारी संख्या में देखा जा रहा है। इसका प्रकोप फलीछेदक कीट के प्रकोप से थोड़ा पहले होता है। रोकथाम समान है, चनाबेधक की तरह।

चने का कटुआ

कटुआ कीट की सूंडियां (गिडार) रात के समय पौधों के तने को काटती हैं। इसकी रोकथाम के लिए 5 प्रतिशत एल्ड्रिन या 1.3 प्रतिशत लिन्डेन धूल 25 से 30 कि.ग्रा./हैक्टर भूमि में डालकर मिला देनी चाहिए।

कटाई

साधारणतया फसल 150 से 170 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। चना मार्च के प्रारम्भ में पककर तैयार हो जाता है। पकने पर पौधों की पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं और पौधा सूखने लगता है।

उपज

चने की उन्नत किस्मों से 25 से 30 क्विंटल/हैक्टर दाना तथा इतना ही भूसा प्राप्त होता है।